सुधीर मित्तल जे.के समक्ष
हरविन्दर सिंह - याचिकाकर्ता
बनाम
गुरप्रीत सिंह और अन्य - प्रतिवादीगण
2021 का आरएसए नंबर 74 (ओ एंड एम)
12 *नवंबर* 2021

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 226—सिविल संहिता प्रक्रिया—आदेश 2 नियम 2—छूट का सिद्धांत—रिकॉर्ड पर पहले के मुकदमे के दस्तावेज और चल रहे मुकदमे के जीवित पक्ष—पहले लंबित मामलों के मुद्दा पर बहस नहीं हुई और पक्षकार आदेश 2 नियम 2 के संबंध में उच्च न्यायालय में आपत्ति उठाने में विफल रहे और यहां तक कि अपीलीय अदालत पर भी—इसलिए छूट का सिद्धांत लागू होगा - आदेश 2 नियम 2 सीपीसी के रोक का मुद्दा तथ्य और कानून का मिश्रित प्रश्न है।

अभिनिर्धारित किया कि आदेश 2 नियम 2 सीपीसी पर रोक का मुद्दा कानून का शुद्ध प्रश्न नहीं है। इसे लागू करने के लिए पहले की दलीलों की जांच की जरूरत है इस प्रकार, यह तथ्य और कानून का एक मिश्रित प्रश्न है। आपत्ति/तर्क की अनुपस्थिति में इस संबंध में निचली अदालतों को इस पर विचार करने का अवसर नहीं मिला है। इस मामले को देखते हुए, यह तर्क भी खारिज किया जाता है।

(पैरा 11)

अपीलकर्ता के लिए एल.एस.मान, वकील,

सुधीर मित्तल, जे।

(1) यह नियमित दूसरी अपील बेचने के समझौते के विशिष्ट प्रदर्शन के मुकदमे से उत्पन्न होती है। बेचने के समझौते की तारीख 05.05.2006 है और वही रिकॉर्ड पर Ex.P1 है। प्रतिवादी नंबर 1 अपनी भूमि 01बीघा 16 बिस्वा और 11 बिस्वांसी वादीगण को कुल मूल्य 2,10,000/-रु. में बेचने के लिए सहमत हो गया। संपूर्ण मूल्य, बेचने के समझौता के कार्यान्वयन के समय पर भुगतान कर दिया था और कब्ज़ा भी दे दिया गया था। प्रतिवादी नंबर 1 ने अपनी माँ, रविंदर कौर से विरासत के उत्परिवर्तन के बाद विक्रय विलेख को पंजीकृत कराने का दायित्व लिया था। मुकदमे का फैसला सुनाया गया और अपील खारिज कर दी गई। दूसरी अपील प्रतिवादी नंबर 2 यानी बाद वाले खरीदार द्वारा की गई है।

(2) अन्य प्रासंगिक तथ्य यह हैं कि प्रतिवादी नंबर 1 यानी मालिक ने अगस्त, 2006 में मुकदमे की संपत्ति को हस्तांतरण की धमकी दी, जिसके कारण वादीगण द्वारा स्थाई निषेधाज्ञा के लिए मुकदमा दायर करना पड़ा। प्रतिवादी नंबर 1 ने बेचने के समझौते को स्वीकार किया जैसा कि निचली अदालत के फैसले से स्पष्ट है।

मुकदमे का निर्णय अंततः लोक अदालत द्वारा पारित अनुदान दिनांक 01.05.2010 के माध्यम से किया गया, जो रिकॉर्ड पर Ex.P4 है। यह अनुदान प्रतिवादी नंबर 1 के दिनांक 01.05.2010 के बयान पर आधारित है। उन्होंने विक्रय अनुबंध स्वीकार किया और कहा कि विक्रय पत्र एक सप्ताह के भीतर निष्पादित कर दिया जाएगा। उन्होंने यह आश्वासन भी दिया कि मुकदमे की संपत्ति को हस्तांतरित नहीं किया जाएगा। इससे पहले प्रतिवादी क्रमांक 1 ने प्रतिवादी क्रमांक 2 के पक्ष में दिनांक 03.08.2006 को विक्रय अनुबंध निष्पादित किया था। इसके बाद, प्रतिवादी नंबर 2 ने विशिष्ट निष्पादन के लिए एक मुकदमा दायर किया, जिसमें प्रतिवादी नंबर 1 उपस्थित हुआ और उसने दलील दी कि उसने पहले ही वादीगण के पक्ष में समझौता दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) निष्पादित कर दिया था। वादीगण ने प्रतिवादी के रूप में भी पक्षकार बनने की मांग की, हालांकि, उन्हें पक्षकार बनाए जाने से पहले, मुकदमा 27.11.2010 को वापस ले लिया गया था क्योंकि प्रतिवादी नंबर 1 ने प्रतिवादी नंबर 2 के पक्ष में दिनांक 16.11.2010 को दो पंजीकृत बिक्री विलेख निष्पादित किए थे। वाद भूमि भी उक्त विक्रय विलेख की विषय वस्तु है। नतीजतन, वादीगण ने 23.12.2010 को वर्तमान मुकदमा दायर किया। प्रतिवादी संख्या 1 की ओर से दायर जवाबदावा में बेचने के समझौते दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) को अस्वीकार कर दिया गया था। यह कहा गया था कि प्रतिवादी नंबर 1 ने वादीगण से 50,000/- रुपये की राशि उधार ली थी, जिसके बाद उससे कुछ कोरे स्टांप पेपर पर हस्ताक्षर कराए गए। इस लेन-देन के गवाह के रूप में किसी गुलज़ार सिंह को उद्धृत किया गया था। छह महीने बाद गुलजार सिंह की मौजूदगी में दोबारा पैसे चुकाए गए। इस प्रकार, प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा स्थापित मामला यह था कि बेचने के समझौते (Ex.P1) जाली और मनगढ़ंत था। प्रतिवादी क्रमांक 2 की ओर से दायर विशिष्ट प्रदर्शन के मुकदमे का जवाब दिया गया था कि बेचने का समझौता दिनांक 05.05.2006 निष्पादित किया गया था, यह प्रस्तुत करके यह समझाने की मांग की गई थी कि उस विशेष समय पर, प्रतिवादी नंबर 1 वादीगण के प्रभाव में था। प्रतिवादी क्रमांक 2 ने इस आधार पर मुकदमा प्रतिवाद किया कि वह प्रतिफल के लिए एक वास्तविक क्रेता था और बेचने का समझौता दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) एक काल्पनिक दस्तावेज था।

(3) जैसा कि यहां ऊपर बताया गया है, निचली अदालत ने पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्यों पर विचार और सराहना के बाद मुकदमे पर फैसला सुनाया। बेचने के समझौते दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) को साबित करने के लिए, पीडब्लू2, हरपाल सिंह, एक प्रमाणित करने वाला गवाह की गवाही लिखी गई । उसने न केवल बेचने का समझौता दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) को साबित किया अपितु संपूर्ण बिक्री राशि की अदायगी बारे रसीद (Ex.P2)को भी साबित किया। प्रतिवादी नंबर 2 द्वारा दायर विशिष्ट निष्पादन के लिए मुकदमे का वादपत्र रिकॉर्ड पर Ex.P10 के रूप में प्रस्तुत और साबित किया गया। उस मुकदमा में प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा दायर जवाबदावा

Ex.P11 के रूप में प्रस्तुत और साबित किया गया। उक्त मुकदमे में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनने के लिए वादीगण का आवेदन Ex.P12 के रूप में प्रस्तुत और साबित किया गया। परिणामस्वरूप, निचली अदालत आश्वस्त थी कि प्रतिवादी नंबर 1 ने बेचने का समझौता दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) को निष्पादित किया था और संपूर्ण बिक्री राशि भी प्राप्त की थी। इसे सबूतों के माध्यम से और अनुदान दिनांक 01.05.2010 में उसकी स्वीकृति के माध्यम से रिकॉर्ड पर साबित किया गया था, जो बयान Ex.P3 और प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा दायर विशिष्ट निष्पादन के मुकदमे में उसके जवाबदावा पर आधारित था। तथ्य के इन निष्कर्षों को प्रथम अपीलकर्ता न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया है क्योंकि प्रतिवादी क्रमांक 2 की अपील खारिज कर दी गई है।

(4) यह ध्यान दिया जा सकता है कि प्रतिवादी नंबर 1 ने निचली अदालत द्वारा पारित फैसले और डिक्री को चुनौती नहीं दी।

(5) चूँकि तय किए गए मुद्दों के आधार पर एक तर्क उठाया गया है, उसे तत्काल संदर्भ के लिए नीचे पुन: प्रस्तुत किया जा रहा है: -

(1) क्या प्रतिवादी नंबर 1 ने वादीगण के पक्ष में बेचने का समझौता दिनांक 05.05.2006 को निष्पादित किया था ? ओ पी पी।

(2) क्या वादीगण अनुबंध के अपने हिस्से का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक हैं/थे ? ओ पी पी।

(3) यदि मुद्दे संख्या 1 और 2 सकारात्मक साबित होते हैं, तो क्या वादीगण प्रार्थना के अनुसार विशिष्ट निष्पादन की राहत के हकदार हैं? ओ पी पी।

(4) क्या वादीगण प्रार्थना अनुसार रु. 2,10,000/- ब्याज सहित वसूली की वैकल्पिक राहत के हकदार हैं ? ओ पी पी

(5) क्या बिक्री विलेख दिनांक 16.11.2010 प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा गुरविंदर कौर और जगबीर सिंह के साथ प्रतिवादी नंबर 2 के पक्ष में निष्पादित किया गया अवैध, व्यर्थ और शून्य हैं? ओ पी पी

(6) क्या वादीगण प्रार्थना के अनुसार स्थायी निषेधाज्ञा से राहत पाने के हकदार हैं? ओ पी पी

(7) क्या विक्रय अनुबंध दिनांक 05.05.2006 जाली और मनगढ़ंत है? ओ पी डी

(8) क्या वाद वर्तमान रूप में चलने योग्य नहीं है? ओ पी डी

(9) क्या वादीगण के पास वर्तमान वाद दायर करने का कोई अधिकार और कार्यवाही का कारण नहीं है? ओ पी डी

(10) क्या वादीगण वर्तमान मुकदमा दायर करने के लिए अपने स्वयं के कार्य और आचरण से रोक दिया गया है? ओ पी डी

(सुधीर मित्तल, जे)

(11) क्या मुकदमा आवश्यक पक्ष के कुसंयोजन और असंयोजन के लिए गलत है? ओ पी डी

(12) क्या मुकदमा कालातीत है? ओ पी डी

(13) राहत।

(6) प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष दायर अपील के आधार की प्रतिलिपि के अवलोकन से पता चलता है बेचने के समझौते दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) की वैधता और विशिष्ट प्रदर्शन की राहत देने के संबंध में चुनौती देते हुए लम्बा स्पष्टीकरण दिया गया है। हालांकि मुकदमे को परिसीमा से वर्जित किये जाने पर आपत्ति उठाना बहुत ही बेतुका है। यह बताने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि ऐसा कैसे है। प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय का एक अवलोकन यह भी दर्शाता है कि मुकदमे को परिसीमा द्वारा वर्जित किए जाने के संबंध में कोई तर्क नहीं उठाया गया था। आदेश 2 नियम 2 सीपीसी भी के साथ आदेश 23 नियम 4 सीपीसी को भी उपयोग नहीं किया गया था। ये आपत्तियाँ जवाबदावा में भी नहीं उठाई गईं जैसा कि निचली अदालत के फैसले से स्पष्ट है। यह प्रस्तुत नहीं किया गया है कि निर्णय में जवाबदावा का पुनरुत्पादन ग़लत है।

(7) अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क दिया है कि इस मामले के तथ्यों के अवलोकन से पता चलता है कि वादीगण ने पहली बार प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा वाद भूमि के हस्तांतरण की धमकी देने के कारण निषेधाज्ञा के लिए मामला दायर किया था। हालाँकि, बेचने के समझौते दिनांक 05.05.2006 (Ex.P1) के अनुसार, प्रतिवादी नंबर 1 के पक्ष में उत्परिवर्तन की मंजूरी के बाद बिक्री विलेख निष्पादित किया जाना था। वादीगण के मन में एक वास्तविक धारणा कि विक्रय विलेख उनके पक्ष में निष्पादित नहीं होगा, होने पर, विशिष्ट निष्पादन के लिए मुकदमा दायर करने के लिए कार्रवाई का कारण उत्पन्न हुआ। ऐसा न किये जाने पर यह माना जायेगा कि इसे छोड़ दिया गया है। इस प्रकार, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 2 नियम 2 द्वारा मुकदमा वर्जित कर दिया गया था। इस तर्क के समर्थन में कि विशिष्ट निष्पादन के लिए मुकदमा दायर करने के लिए कार्रवाई का कारण उत्पन्न होता है, भले ही बिक्री विलेख के निष्पादन की तारीख नहीं आई है, उच्चतम न्यायालय के फैसले ***मेसर्स विर्गो इंडस्ट्रीज (इंजी.) पी. लिमिटेड*** *बनाम* ***मे. वेंचरटेक सॉल्यूशंस पी. लिमिटेड में***[1] पर भरोसा किया गया है

(8) आदेश 2 नियम 2 सीपीसी की रोक की पैरवी न करने के संबंध में यह प्रस्तुत किया गया है कि कानून का शुद्ध प्रश्न किसी भी स्तर पर उठाया जा सकता है।

---

[1] 2012 (4) आर.सी.आर (सिविल) 372

इस प्रयोजन के लिए उच्चतम न्यायालय का फैसले ***तारिनिकामल पंडित और अन्य*** *बनाम* ***परफुल्ल कुमार चटर्जी (मृत) एलआर***[2] उपयोग किया गया है। इस मामले में छूट का सिद्धांत लागू नहीं होगा जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने ***पंजाब राज्य*** *बनाम* ***बुआ दास कौशल***[3] के फैसले में दिया था। जब तक प्रासंगिक साक्ष्य रिकॉर्ड पर उपलब्ध है और पक्षकार क्रियाशील हैं, विवाद में किसी विशेष मुद्दे को तय न करने से भी कोई फर्क नहीं पड़ेगा। इस प्रयोजन के लिए, ***स्वामी आत्मानंद और अन्य*** *बनाम* ***श्री रामकृष्ण तपोवनम और अन्य***[4] में सर्वोच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया गया है

(9) अगला तर्क यह उठाया गया कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित है। इसे साबित करने की जिम्मेदारी गलत तरीके से प्रतिवादी पर डाल दी गई थी। परिसीमा अधिनियम, 1963 (बाद में इसे परिसीमा अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 3, परिसीमा के मुद्दे पर निर्णय लेने का कर्तव्य न्यायालय पर डालती है, भले ही परिसीमा का बचाव स्थापित नहीं किया गया है। रिकॉर्ड पर कोई सबूत नहीं है कि 23.12.2007 और 23.12.2010 के बीच में किसी भी समय प्रतिवादी नंबर 1 के पक्ष में उत्परिवर्तन की मंजूरी दी गई थी सीआर-2659-2016 में इस न्यायालय की एकल पीठ के दिनांक 18.05.2016 के फैसले/आदेश पर भरोसा किया गया है, जिसका शीर्षक ***प्रीतम सिंह*** *बनाम* ***अमर सिंह, कानूनी प्रतिनिधियों और अन्य*** के माध्यम से है। अंततः, यह तर्क दिया गया कि आदेश 23 सिविल प्रक्रिया संहिता का नियम 4 वर्तमान वाद पर रोक लगाता है क्योंकि निषेधाज्ञा के लिए दायर वाद के समायोजन के समय, कार्रवाई के उसी कारण पर एक नया मुकदमा दायर करने के लिए कोई अनुमति नहीं ली गई थी।

(10) सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण, मैं सीमा के संबंध में तर्क सुनूंगा। इस मुद्दे पर निर्णय लेते समय, निचली अदालत ने माना कि मुकदमा परिसीमा के भीतर था क्योंकि पंजीकृत विक्रय विलेख को प्रतिवादी क्रमांक 1 के पक्ष में नामांतरण की मंजूरी के बाद ही निष्पादित किया जाना था। चूंकि, प्रतिवादी नंबर 1 ने यह दिखाने के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया था कि उसने वादीगण को उत्परिवर्तन की मंजूरी के तथ्य की जानकारी पहले किसी भी समय दी थी। यह वैध रूप से अनुमान लगाया जा सकता है कि उक्त तथ्य वादीगण को तभी पता चला, जब बयान दिनांक 01.05.2010 (Ex.P3) प्रतिवादी नं.1 द्वारा स्थायी निषेधाज्ञा के मुकदमे में दर्ज किया गया था। इस प्रकार, मुकदमा परिसीमा के भीतर था। प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष दायर अपील के आधार से पता चलता है कि इस मुद्दे पर कोई दबाव नहीं है। बहुत ही सहजता से, यह कहा गया है कि मुकदमा परिसीमा द्वारा वर्जित था। प्रथम अपीलीय न्यायालय के निर्णय से पता चलता है कि इस मुद्दे पर बिल्कुल भी बहस नहीं की गई।. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अपीलकर्ता-प्रतिवादी नंबर 2 ने जानबूझकर प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष सीमा के बिंदु प्रभावी ढंग से उठाने और बहस करने का विकल्प नहीं चुना। निचली अदालत के निर्णय में उसके खिलाफ एक निष्कर्ष निकाला जा रहा

---

2 ए.आई.आर. 1979 (एस सी) 1165
3 ए.आई.आर. 1971 (एस सी) 1676
4 2005 (3) आर.सी.आर (सिविल) 404

है कि प्रतिवादी संख्या 2 इसके प्रति बहुत जागरूक और सचेत था, लेकिन, जानबूझकर, प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष इस मामला न उठाना चुना । मेरी सुविचारित राय में, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अपीलकर्ता-प्रतिवादी संख्या 2 ने सीमा पर आपत्ति जताना छोड़ दिया था और उसे नियमित द्वितीय अपील में इस आधार उठाने को अनुमति नहीं दी जा सकती। सर्वोच्च न्यायालय के 2020 के सिविल अपील संख्या 2943-2944, शीर्षक ***कल्पराज धर्मशी और एक अन्य*** *बनाम* ***कोटक निवेश सलाहकार सीमित और एक अन्य***[5] के 10.03.2021 निर्णय में छूट के सिद्धांत को बहुत अच्छी तरह से समझाया गया है। 'छूट' की परिभाषा पर विचार करने के बाद , जैसा कि इंग्लैंड के हैल्सबरी कानून, चौथे संस्करण, पैरा संख्या 1471 में दी गई है, यह माना गया है कि छूट का अनुमान एक दल के आचरण से लगाया जा सकता है। यदि, कोई दल अपने अधिकारों के साथ असंगत तरीके से कार्य करती है, तो यह माना जाएगा कि उसने अधिकारों को छोड़ दिया है। एक वैधानिक अधिकार भी इस सिद्धांत के अधीन है, बशर्ते इसमें कोई सार्वजनिक हित शामिल न हो। सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ***मानक लाल*** *बनाम* ***डॉ. प्रेम चंद***[6] *मामले* में ऐसा उल्लेख किया गया है। उस मामले में, एक वकील को तीन सदस्यों के ट्रिब्यूनल द्वारा पेशेवर कदाचार का दोषी ठहराया गया था। इस निर्णय को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी और उठाई गई आपत्तियों में से एक यह थी कि ट्रिब्यूनल के सदस्यों में से एक शिकायतकर्ता की ओर से पेश हुआ था और तदनुसार उसे बत्तौर सदस्य कार्य करने से अयोग्य घोषित कर दिया गया था। चूंकि, ट्रिब्यूनल के समक्ष, इस संबंध में कोई आपत्ति नहीं उठाई गई थी, आपत्ति को छूट के आधार पर खारिज कर दिया गया था। ***बुआ दास कौशल (सुप्रा),*** *मामले का फैसला अपीलकर्ता के हक में नहीं दिया जा सकता, क्योंकि उक्त मामले में,* सर्वोच्च न्यायालय ने माना था *कि* छूट लागू नहीं होगी, क्योंकि पुनः न्याय की आपत्ति पर न केवल निचली अदालत द्वारा विचार किया गया अपितु प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा भी। जिस फैसले को *पूर्व न्यायिक माना गया था* , वह रिकॉर्ड पर था। उस मामले में तथ्य यह थे कि एक हेड कांस्टेबल को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था, जिसके आदेश को उसके विभाग की अपीलो को अस्वीकार कर बरकरार रखा गया था। लेटर्स पेटेंट अपील की तरह रिट याचिका भी विफल रही। सुप्रीम कोर्ट ने अपील की अनुमति देने से इनकार कर दिया। इसके बाद, हेड कांस्टेबल ने घोषणा के लिए मुकदमा दायर किया कि वह बर्खास्तगी का आदेश, संविधान के अनुच्छेद 311 का उल्लंघन था। जिसे खारिज कर दिया गया। प्रथम अपील भी विफल रही। दूसरी अपील में, उच्च न्यायालय ने निचली अदालत से दो अतिरिक्त मुद्दों पर रिपोर्ट मांगी, क्या लेटर्स पेटेंट अपील का निर्णय *न्यायिक निर्णय के रूप में संचालित होता है और क्या* राज्य द्वारा *न्यायिक निर्णय* की याचिका को छोड़ दिया गया था। निचली अदालत ने एक रिपोर्ट भेजी कि पिछला निर्णय *न्यायिक के रूप में काम नहीं करता था* और राज्य ने उक्त याचिका को छोड़ दिया गया था। दूसरी अपील पर सुनवाई की गई और यह

---

5 2021 (166) एस सी एल 583

6 ए.आई.आर. 1957 एस सी आर 575

मानते हुए अनुमति दी गई कि राज्य ने *पुनः न्याय की याचिका* को छोड़ दिया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि छूट का कोई सवाल ही नहीं है, क्योंकि इस मुद्दे पर पक्षकार सचेत हैं, हालांकि, जवाब दावा में कोई विशेष दलील नहीं दी गई और ना ही कोई मुद्दा तयार किया गया। वर्तमान मामले में, प्रतिवादी ने प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष सीमा की रोक पर बहस नहीं की, भले ही, निचली अदालत द्वारा उसके ख़िलाफ़ एक निष्कर्ष दिया गया था, जबकि, सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष मामले में, हालांकि, प्रतिवादी द्वारा *पूर्व न्यायिकता* की वकालत नहीं की गई थी, प्रासंगिक साक्ष्य रिकॉर्ड पर उपलब्ध थे और मुद्दा सभी न्यायालयों के समक्ष उठाया गया था। उक्त मुद्दे पर, निचली अदालत और प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा उसके पक्ष में निष्कर्ष लौटाए गए और परिस्थितियों के तहत, यह माना गया कि छूट का सिद्धांत लागू नहीं था।

(11) ***मेसर्स विर्गो इंडस्ट्रीज (इंजी.) पी. लिमिटेड (सुप्रा)* में** , यह माना गया है कि विशिष्ट निष्पादन के लिए मुकदमा, पंजीकृत बिक्री विलेख के निष्पादन के लिए सहमत तिथि से पहले भी दायर किया जा सकता है, यदि किसी विशेष मामले के तथ्य ऐसा बताते हैं। इस प्रकार, अपीलकर्ता-प्रतिवादी नंबर 2 अपने जवाब दावा में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2 नियम 2 की सीमा को बढ़ाने का पूरी तरह से हकदार होगा। ऐसा न करने पर और न ही इस मुद्दे को निचली अदालत या प्रथम अपीलीय कोर्ट के समक्ष उठाने पर, यह माना जाएगा कि उसने, वैसे ही, यह अधिकार छोड़ दिया है। ***स्वामी आत्मानंद के मामले* में** (सुप्रा) सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय अलग है। उक्त मामले में, उच्च न्यायालय ने माना कि पहले के मुकदमे में तथ्य का यह समवर्ती निष्कर्ष निकाला गया था कि जिन स्कूलों के संबंध में मुकदमा दायर किया गया था, उन्हें तपोवनम के नाम से मान्यता प्राप्त थी और यह कि सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं ने एक रियायत दर्ज की थी, तपोवनम उक्त संस्थानों के संबंध में शैक्षिक एजेंसी थी और सभी दस्तावेज उसके नाम पर थे। इसके बाद, तपोवनम ने उन स्कूलों और संपत्तियों का पूर्ण स्वामी होने का दावा करते हुए एक मुकदमा दायर किया, जो कब्जे की परिणामी राहत के साथ उक्त मुकदमे का विषय था। उच्चतम न्यायालय के समक्ष, अपीलकर्ताओं द्वारा दायर मुकदमे में पहले के फैसले से बड़े पैमाने पर भरोसा किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष अपीलकर्ताओं द्वारा इसका पता नहीं लगाया गया था। सभी प्रासंगिक दस्तावेज़ रिकॉर्ड पर थे और निचली अदालत के साथ-साथ प्रथम अपीलीय अदालत ने माना कि पहले का फैसला, पूर्व न्यायिक के रूप में क्रियाशील था और मुकदमे पर फैसला सुनाया। उच्चतम न्यायालय के समक्ष, आपत्ति उठाई गई थी कि पुनः न्याय के संबंध में कोई मुद्दा तैयार नहीं किया गया है, उस पर बहस या विचार नहीं की जा सकता है, इस आधार पर ख़ारिज कर दिया गया था कि पक्षकार इस बारे सचेत थे और कोई पूर्वाग्रह पैदा नहीं किया गया है। वर्तमान मामला में ऐसी स्थिति नहीं है। पहले के मुक़दमे के दस्तावेज़ भले ही रिकॉर्ड पर हो, लेकिन सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2 नियम 2 को ना तो निचली अदालत के समक्ष और ना ही प्रथम अपीलीय न्यायालय के समक्ष उठाया गया था। अत: इस निर्णय में दिये गये सिद्धांत पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसके विपरीत,

इस आपत्ति के प्रति सचेत रहते हुए और इसे ना उठाये जाने पर, छूट का सिद्धांत लागू होगा। यह तर्क कि कानून का शुद्ध प्रश्न किसी भी स्तर पर उठाया जा सकता है, सफल नहीं हो सकता, क्योंकि कानून का कोई प्रश्न जिसमें तथ्यों की कोई जांच शामिल नहीं है, उसे उठाने की अनुमति दी जा सकती है जैसा कि ***तारिनिकामल पंडित*** *के मामले* (सुप्रा) में माना गया है। आदेश 2 नियम 2 सीपीसी पर रोक का मुद्दा शुद्ध रूप से कानून का प्रश्न नहीं है। इसे लागू करने के लिए पहले की याचिकाओं की जांच करने की जरूरत है। इस प्रकार, यह तथ्य और कानून का एक मिश्रित प्रश्न है। इस संबंध में आपत्ति/तर्क के अभाव में निचली अदालतों को इस पर विचार करने का अवसर नहीं मिला है। मामले को देखते हुए यह तर्क भी खारिज किया जाता है।

(12) उठाया गया अंतिम तर्क आदेश 23 नियम 4 सीपीसी के निषेध के संबंध में है। यह हताशा का तर्क है जैसा कि उक्त नियम के अवलोकन से स्पष्ट है। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 23 के नियम 4 में कहा गया है कि इस आदेश की कोई भी बात किसी डिक्री या आदेश के निष्पादन की किसी भी कार्यवाही पर लागू नहीं होगी। इसका मतलब यह है कि आदेश 23 सीपीसी किसी डिक्री या आदेश के निष्पादन की कार्यवाही पर लागू नहीं होता है। मैं यह समझ नहीं पा रहा हूँ कि कैसे, यह नियम तत्काल मुकद्दमे पर रोक लगाता है। वास्तव में,ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता के विद्वान वकील यह तर्क देना चाहते हैं कि सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 23 नियम 1 उपनियम 4 लागू होता है, थी। क्योंकि पहले मुकद्दमे के निस्तारण के समय, नया मुकदमा दायर करने की कोई अनुमति नहीं ली गई थी। उक्त उपनियम इस मामले में भी लागू नहीं होता है, क्योंकि पहले का मुकदमा न तो वापस लिया गया था और न ही दावे का कोई हिस्सा छोड़ दिया गया था। वास्तव में, निचली अदालतों की डिक्री के अवलोकन से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह डिक्री प्रतिवादी संख्या 1 के बयान के आधार पर की गई थी।

(13) आदेश 23 नियम 3 सीपीसी के आधार पर एक संबंधित तर्क उठाया जा सकता है जो समझौते के आधार पर मुकदमे का निर्णय होने की स्थिति में डिक्री पारित करने का प्रावधान करता है। इस प्रकार, यह तर्क दिया जा सकता है कि किसी विशिष्ट निष्पादन के लिए मुकदमा दायर करने के बजाय पहले की डिक्री निष्पादित की जानी चाहिए थी। तथापि, यह तर्क भी स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि ना ही जवाब दावे में आपत्ति उठाई गई थी और ना ही निचली न्यायालयों के समक्ष कोई

तर्क दिया गया था। इसलिए, इसे छोड़ दिया गया, ऐसा माना गया था।

(14) अपील में कोई योग्यता नहीं है, इसलिए इसे खारिज किया जाता है।

डॉ. पायल मेहता

अस्वीकरण :- स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ कर और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यन्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

प्रमाणित द्वारा:

संजय जैन (अनुवादक)

जिला एवं सत्र न्यायालय,पानीपत